इकाई 16 ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 ग्रामीण समस्याओं पर फीचर का अभिप्राय

16.3 ग्रामीण फीचर के लिए विषय का चयन और लेखन

16.3.1 कृषि संबंधी फीचर

16.3.2 ग्रामीण विकास संबंधी फीचर

16.3.3 सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर

16.3.4 लोकजीवन संबंधी फीचर

16.4 भाषा–शैली और प्रस्तुति

16.5 सारांश

16.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

यह इस खण्ड की पाँचवीं और अंतिम इकाई है। इस इकाई में ग्रामीण वर्ग के लिए लेखन की आवश्यकता, प्रासंगिकता और महत्व पर विचार किया गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- ग्रामीण समस्याओं से संबंधित फीचर का अभिप्राय बता सकेंगी/सकेंगे;
- ग्रामीण वर्ग के लिए फीचर लेखन के महत्व को रेखांकित कर सकेंगी/सकेंगे;
- ग्रामीण समस्याओं से संबंधित फीचर के प्रकारों का उल्लेख कर सकेंगी/सकेंगे, विषय के चयन में सावधानी बरत सकेंगी/सकेंगे;
- सामग्री संकलन और उसके संयोजन के बारे में बता सकेंगी/सकेंगे; और
- ग्रामीण फीचर लेखन के कौशल का विकास कर सकेंगी/सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

जैसा कि आप जानते हैं, हमारे देश की लगभग तीन चौथाई आबादी गांवों में रहती है। गांव के लोग मुख्य रूप से खेती करते हैं। इनमें कई लोगों के पास सैकड़ों बीघा खेत हैं तो कइयों के पास महज अपने परिवार का गुजर–बसर करने भर के लिए अन्न उपजा पाने भर के खेत हैं। इनमें कई ऐसे भी हैं जिनके पास बिल्कुल खेत नहीं है और वे बड़े किसानों के खेतों में मजदूरी करके पेट पालते हैं या उनसे बंटाई पर खेत लेकर खेती करते हैं। इनके अलावा वहां ऐसे भी अनेक लोग हैं जिनका मुख्य पेशा खेती नहीं है। इनमें बुनकर, दर्जी, बढ़ई, पुरोहित, दुकानदार आदि हैं। खेती से जुड़ी समस्याओं के साथ–साथ गांव में रहने वाले अलग–अलग जातियों और वर्गों के लोगों की अपनी अलग–अलग समस्याएं हैं। इन समस्याओं को लेकर उनके बीच

आपसी टकराव भी हैं। यह बताने की जरूरत नहीं कि गांवों में शहरों जैसी सुविधाएं नहीं हैं। अनेक गांवों में सड़क, बिजली, पानी, विद्यालय, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र जैसी मूलभूत सुविधाओं का भी अभाव है। किसानों को खाद, बीज, कीटनाशक और सिंचाई के साधनों के लिए काफी संघर्ष करना पड़ता है। अक्सर मौसम की मार से फसलें चौपट हो जाती है। जो फसलें वे उगा भी लेते हैं उनकी वाजिब कीमत नहीं मिल पाती। इस तरह खेती पर निर्भर रहने वाले हर किसान चाहे वह बड़ा हो या छोटा की आर्थिक स्थिति बदतर है। हाल के वर्षों में महाराष्ट्र और पंजाब में किसानों की आत्महत्या की घटनाएं भी हुई हैं। सरकारें किसानों की दशा सुधारने के लिए तरह–तरह की योजनाओं की घोषणाएं करती हैं, पंचायतों के माध्यम से विकास कार्यक्रम चलाने की योजनाएं तैयार करती हैं, मगर गांवों की दशा में अपेक्षित सुधार नजर नहीं आता।

ग्रामीण समाज पर फीचर लिखते समय हालांकि मुख्य विषय कृषि से जुड़ी समस्याएं हैं लेकिन इसके अलावा वहां के समाज के रीति–रिवाज, संस्कृति, परंपराए, सामाजिक बदलाव, शिक्षा का स्तर, स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं, मूलभूत सुविधाओं का अभाव, आर्थिक स्थिति, कानून–व्यवस्था की हालत आदि भी महत्वपूर्ण विषय हैं। शहरी आबोहवा गांवों में घुस आने से ग्रामीण रहन–सहन में तेजी से बदलाव आ रहे हैं। गांवो में टेलीविजन, मोबाइल फोन और यातायात साधनों की पहुंच संभव होने से सूचनाओं के आदान–प्रदान और आवागमन में सहूलियत हुई है, लेकिन लोक परंपराएं धूमिल हो रही हैं। विकास की दौड़ में अगर कुछ सकारात्मक परिवर्तन हो रहे हैं तो कई नकारात्मक प्रभाव भी गांवों के परिवेश में दिखाई दे रहे हैं। इस पाठ में हम ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन सीखने के क्रम में ऐसी ही बातों पर विचार करेंगे।

16.2 ग्रामीण समस्याओं पर फीचर का अभिप्राय

ग्रामीण समस्याओं से हमारा अभिप्राय संपूर्ण ग्रामीण परिवेश, समाज, परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलाव और विकृतियों से है। ग्रामीण विकास के नाम पर चलाई जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन, स्थानीय शासन को मजबूत और स्वायत्त बनाने के लिए चल रहे प्रयासों, आर्थिक विकास की गति, शिक्षा, रोजगार, कानून व्यवस्था आदि के बारे में विश्लेषण–विवेचन से है। आमतौर पर ग्रामीण परिवेश के बारे में लिखते समय लोग वहां की परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलावों विकृतियों पर ही अधिक ध्यान केंद्रित करते हैं। ज्यादा हुआ तो किसानों की दुर्दशा और खेती में मूलभूत सुविधाओं के अभाव और सरकारी योजनाओं की गति का विवेचन, विश्लेषण करके अपनी जिम्मेदारी पूरी समझ लेते हैं। लेकिन गांवों में आर्थिक बदहाली, विविध टकरावों से उपजे सामाजिक तनाव, बेरोजगारी के कारण युवाओं में आ रहे भटकाव, वहां की महिलाओं, बच्चों की दशा, उनके मूल अधिकारों की अनदेखी और स्थानीय शासन में आ रही विकृतियों की तरफ कम लोगों का ध्यान जा पाता है। ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय इन सभी पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

पिछले कुछ सालों में जिस तेजी से संचार माध्यमों का प्रसार हुआ है उससे ग्रामीण इलाकों में भी पत्र–पत्रिकाओं की पहुंच आसान हुई है। गांवों में जहां कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त लोग हैं, जो अध्यापक या दूसरे पेशों से जुड़े हैं वहीं काफी बड़ी संख्या में अर्द्ध–शिक्षित और नवसाक्षर भी हैं, जो पत्र–पत्रिकाएं पढ़ तो लेते हैं, लेकिन गंभीर और क्लिष्ट भाषा में होने के कारण अपने ही बारे में लिखी बातें समझ नहीं पाते।

उनका लाभ नहीं उठा पाते। ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि वे न सिर्फ पढ़े–लिखे लोगों को बल्कि नवसाक्षरों और कम पढ़े–लिखे लोगों को ध्यान में रखकर भी लिखे जाएं। ग्रामीण समाज में अब भी तमाम तरह के अंधविश्वास और कुरीतियां व्याप्त हैं। उन्हें दूर करने के लिए सरकारी और गैरसरकारी संस्थाएं निरंतर प्रयास कर रही हैं। इसमें पत्र–पत्रिकाओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। इसलिए उन कुरीतियों के खिलाफ वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के उद्देश्य से भी फीचर लिखे जाते हैं।

16.3 ग्रामीण फीचर के लिए विषय का चयन और लेखन

ग्रामीण समाज हालांकि कृषि आधारित है, लेकिन शहरी और औद्योगिक विकास के चलते इसमें कई तरह के परिवर्तन आ रहे हैं। ये परिवर्तन कुछ सकारात्मक हैं तो कुछ नकारात्मक भी। सरकारी योजनाओं और शहरी चलन के गांवों में प्रवेश से वहां के रहन–सहन और सुविधाओं में बेहतरी आई है तो कई पारंपरिक और लोक संस्कृतियां नष्ट भी हुई हैं। सामाजिक बदलाव का एक प्रभाव मध्यवर्गीय तनाव के रूप में भी दिखाई देने लगा है। ग्रामीण फीचर के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों से सम्बन्धित विषय चुने जा सकते हैं –

i) कृषि संबंधी फीचर
ii) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर
iii) सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर
iv) लोकजीवन संबंधी फीचर

कह सकते हैं कि यही ग्रामीण फीचर के प्रकार भी हैं।

16.3.1 कृषि संबंधी फीचर

जैसा कि हम पहले कह आए हैं, ग्रामीण समाज मुख्य रूप से कृषि आधारित है। लेकिन आबादी बढ़ने के साथ–साथ जहां लोगों की निर्भरता दूसरे क्षेत्रों पर बढ़ी है वहीं परिवारों के बंटने से खेत भी बंटे हैं। भवनों के लिए जमीनों के उपयोग से खेती लायक जमीन कम हुई है। इस तरह छोटे खेतिहर किसानों की संख्या बढ़ी है। जो भूमिहीन किसान थे, उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं आया है। लाखों एकड़ जमीन अब भी बंजर पड़ी हुई है। भूदान के जरिए जो जमीनें प्राप्त हुई थीं उनका बंटवारा अभी तक ठीक से नहीं हो पाया है। पश्चिम बंगाल को छोड़कर अन्य राज्यों में भूमि हदबंदी कानूनों पर अमल न हो पाने के कारण अतिरिक्त जमीन पर कब्जा जमाए बड़े किसानों से जमीनें लेकर सीमांत और भूमिहीन किसानों को बांटने का काम तो दूर की बात, बंजर भूमि का बंटवारा भी अभी तक सुनिश्चित नहीं हुआ है। कई राज्यों में इसे लेकर आंदोलन चलाए जा रहे हैं। औद्योगिक इकाइयों को कारोबार फैलाने के लिए राज्य सरकारों द्वारा प्रोत्साहित किए जाने के कारण खेती योग्य भूमि का काफी बड़ा हिस्सा औद्योगिक इकाइयों के हिस्से में चला गया है। इस तरह तमाम कोशिशों के बावजूद कृषि उत्पादन की दर में अपेक्षित सफलता हासिल नहीं हो पा रही है।

खेती योग्य जमीन की कमी के अलावा बिजली, सिंचाई के साधन, खाद–बीज और कीटनाशकों की सुविधाएं ठीक से उपलब्ध न हो पाने के कारण भी कृषि के प्रति किसानों की दिलचस्पी कम हुई है। कई बड़े किसान खेती का रास्ता छोड़ कर

व्यवसाय की तरफ बढ़ रहे हैं। पिछले कुछ साल में खेती के लिए तकनीकी साधनों के इस्तेमाल को बढ़ावा देने की वजह से किसानों का इस्तेमाल बड़े ट्रैक्टरों और हार्वेस्टर आदि के प्रति रुझान बढ़ा है। आसान शर्तों पर कर्ज की सुविधाएं उपलब्ध होने के कारण काफी बड़ी तादाद में कृषि उपकरण जुटा लिए हैं। जिन किसानों को कृषि उपकरणों की जरूरत नहीं भी है, या उनके पास जमीन कम है उन्होंने भी दूसरे किसानों की देखा–देखी या होड़ में कर्ज लेकर महंगे कृषि उपकरण खरीद लिए हैं। इस तरह अनेक किसान कर्ज के बोझ तले दब गए हैं। खाद बीज कीटनाशकों के लिए कर्ज लेने और फसल बर्बाद होने या उनकी उचित कीमत न मिल पाने के कारण भी काफी बड़ी संख्या में किसानों के सर पर कर्ज लदा है। सब्ज़ी उगाने वाले किसानों की स्थिति इनमें सबसे खराब है, क्योंकि फसल खराब होने या उचित कीमत न मिल पाने के कारण उन पर एकदम से बोझ बढ़ जाता है। यही वजह है कि गन्ना, कपास और सब्जियां उगाने वाले किसानों में पिछले कुछ सालों में आत्महत्या की प्रवृति बढ़ी है।

कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से केन्द्र और राज्य सरकारें तरह–तरह की योजनाएं चला रही हैं। कृषि ऋण के लिए आसान शर्ते, किसान क्रेडिट कार्ड, फसलों के समर्थन मूल्य में वृद्धि, खाद–बीज– कीटनाशकों की उपलब्धता बढ़ाने, सिंचाई के पारंपरिक और गैर–पारंपरिक साधनों का विकास करने, कृषि उत्पादों की राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में पहुंच सुनिश्चित करने के लिए योजनाएं चलाई जा रही हैं। गांवों में गरीबी रेखा के नीचे जी रहे लोगों के लिए अंत्योदय और ग्रामीण रोजगार योजना के तहत कम से कम सौ दिन का रोजगार मुहैया कराने जैसी योजनाएं चलाई जा रही हैं।

इन तमाम योजनाओं और सुविधाओं के चलते गांवों में कई बेहतर नतीजे आए हैं और किसानों में खेती के प्रति उत्साह बढ़ा है। जो लोग खेती की बजाय मजदूरी और दूसरे धंधों पर निर्भर हैं उन्हें भी काफी सहूलियत हुई है। कृषि अनुसंधान के कारण खेती में नए–नए प्रयोग भी देखने को मिले हैं। मगर अब भी किसानों की दशा को बेहतर बनाना एक बड़ी चुनौती है। दूसरे औद्योगिक क्षेत्रों का जिस तेजी से फैलाव हो रहा है, देश के सकल घरेलू उत्पाद में उनकी भागीदारी निरंतर बढ़ रही है, लेकिन कृषि क्षेत्र के मुख्य रूप से मौसम के मिजाज पर निर्भर होने के कारण इसके बारे में कोई भविष्यवाणी करना या आर्थिक विकास में इसकी सहभागिता का दावा करना संभव नहीं है। गौरतलब है कि सकल घरेलू उत्पाद की दर कृषि उत्पादन पर अधिक निर्भर करती है। लेकिन कृषि को उद्योग का दर्जा आज तक नहीं मिल सका है। केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच फसलों के समर्थन मूल्य को लेकर अक्सर रस्साकशी चलती रहती है। फसलों की खरीदारी का उचित प्रबंध न होने, विपणन और प्रोसेसिंग, भंडारण आदि की सुविधा न होने के कारण फल–सब्जियां और दूसरी कई कच्ची फसलों के मामले में किसानों को स्थानीय मंडियों पर निर्भर रहना पड़ता है। जिस मौसम में कच्ची फसलों का उत्पादन होता है उसी मौसम में उन्हें बेचने के अलावा किसानों के पास कोई चारा नहीं होता। इसलिए उत्पादन और खपत में असमानता होने के कारण औने–पौने दाम पर फल और सब्जियों को खपाने के अलावा किसानों के पास दूसरा चारा नहीं होता। जिन कुछ क्षेत्रों में शीतगृहों (कोल्ड स्टोरेज) की व्यवस्था है वहां आलू, टमाटर, सेब आदि के भंडारण के अलावा दूसरी फसलों के भंडारण की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती। स्थानीय मंडियों से बाहर भेजे जाने की सुविधा न होने के कारण अधिकांश कच्ची फसलों की खपत नहीं हो पाती और वे सड़

कर खराब हो जाती हैं। इस तरह कई बार किसान को लागत भर का पैसा भी वसूल नहीं हो पाता।

खेती में बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए किसानों को नियमित मिट्टी परीक्षण, बंजर भूमि को खेती लायक बनाने, सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध कराने और कीड़े या फसलों में रोग लगने की स्थिति में बेहतर जानकारी और सुविधाएं उपलब्ध कराने की जरूरत होती है। हालांकि हर राज्य में कृषि अनुसंधान केन्द्र और ब्लॉकों पर इसकी सुविधाएं उपलब्ध हैं, मगर सभी किसानों की पहुंच उन तक नहीं हो पाती। अब भी देश के ज्यादातर किसान जागरूकता न होने और अपेक्षित सरकारी सहयोग प्राप्त न हो पाने के कारण कृषि संबंधी पारंपरिक साधनों का इस्तेमाल करते हैं। वे खेतों की मिट्टी की जांच नहीं करा पाते, जिससे उसकी उर्वरा शक्ति को बेहतर बनाने के उपाय नहीं करा पाते हैं। किसानों में खेती के प्रति जागरूकता पैदा करने, खाद–बीज–कीटनाशक के इस्तेमाल और आधुनिक तकनीकों के बारे में सलाह उपलब्ध कराना ब्लॉक और कृषि केंद्रों के अधिकारियों की जिम्मेदारी होती है। मगर वे इसके प्रति प्रायः लापरवाह दिखाई देते हैं। नतीजतन, कई सरकारी योजनाओं का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता।

इस प्रकार कृषि संबधी फीचर लिखते समय लेखक से अपेक्षा की जाती है कि जुड़ी आर्थिक समस्याओं, मूलभूत सुविधाओं और सरकारी योजनाओं के बारे में उसे विस्तृत जानकारी हो और वह उनके विश्लेषण की क्षमता रखता हो। इसके लिए जरूरी है कि कृषि संबंधी अनुसंधानों, सरकारी योजनाओं और दूसरे देशों में चल रहे प्रयोगों के बारे में निरंतर सूचनाएं हासिल करते रहें। सिर्फ खेती की बदहाली या कृषि क्षेत्र में आने वाली गिरावट के बारे में लिखना कृषि संबंधी फीचर का उद्देश्य नहीं होता। कृषि संबंधी अनुसंधानों और तकनीकी प्रयोगों, नई विधियों के बारे में जानकारी उपलब्ध कराना भी कृषि संबंधी फीचर का उद्देश्य होता है। चूंकि ज्यादातर किसान या तो अनपढ़ हैं या कम पढ़े लिखे हैं इसलिए खेती के प्रति उनमें जागरूकता पैदा करना भी ऐसे फीचर का मकसद होना चाहिए। एक उदाहरण देखिए –

''एक तो झारखंड में रूह कंपा देने वाली गरीबी, उस पर अकाल की छाया। राज्य के 70 फीसद परिवारों को एक जून की रोटी भी नसीब नहीं होती है। भूख से बिलबिलाते ये गरीब जंगली साग और पेड़ों की जड़ों को उबाल कर नमक के साथ खाकर किसी तरह अपना पेट भरते हैं। जंगली साग खाकर ये कई तरह की बीमारियों के शिकार होते हैं और मौत के काल में समा जाते हैं। औरतों का हाल तो और बुरा है। बुरी तरह कुपोषित ये महिलाएं अपने बच्चे को न तो अपना दूध पिला पाती हैं और न ही अनाज का एक दाना दे पाती हैं। नतीजतन, कई बच्चे अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। यह महज संयोग नहीं है कि पूरे देश में शिशु मृत्यु दर सबसे अधिक झारखंड में ही है।''

बुझे चेहरे : सूखे खेत–प्रशांत शरण (सहारा समय–17 सितंबर 2005)

16.3.2 ग्रामीण विकास संबंधी फीचर

केंद्र और राज्य सरकारें गांवों के विकास के लिए तरह–तरह की योजनाएं चलाती रहती हैं। गांवों में अनेक समस्याओं की जड़ में लोगों में शिक्षा और समस्याओं से निपटने के प्रति जागरूकता का अभाव है। इसलिए लोगों को शिक्षित बनाने के मकसद से सभी लोगों तक शिक्षा की पहुंच सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सर्वशिक्षा

अभियान शुरू किया गया है। यूपीए सरकार ने शिक्षा मद में पहले से अधिक धन मुहैया कराने का वचन दिया है। पहले सकल घरेलू उत्पाद का महज चार फीसद शिक्षा मद में खर्च करने का प्रावधान था। वह भी पूरी तरह खर्च नहीं हो पाता था। इस मद के धन में से कटौती करके दूसरे मदों में खर्च कर दिया जाता था। यूपीए सरकार ने न सिर्फ इस धन को पूरी तरह शिक्षा मद में खर्च का आश्वासन दिया है, बल्कि इसे बढ़ा कर सकल घरेलू उत्पाद का छह फीसद करने का भी वचन दिया है। केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की शैक्षणिक संस्थाओं की वित्तीय स्थिति सुधारने के लिए गठित समिति ने भी सुझाव दिया था कि सकल घरेलू उत्पाद का कम से कम छह फीसद शिक्षा पर खर्च किया जाना चाहिए और उसमें से दो से तीन फीसद स्कूली शिक्षा पर खर्च होना चाहिए। सरकार ने उस सिफारिश को स्वीकार कर लिया है। इससे प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था में सुधार की उम्मीद बढ़ी है।

फिलहाल ज्यादातर गांवों में प्राथमिक स्कूल नहीं हैं। तीन–चार गांवों के बीच एक स्कूल है और आठ–दस गांवों पर एक माध्यमिक स्कूल। उच्चतर माध्यमिक और उच्च शिक्षा के लिए शैक्षणिक संस्थानों की कमी का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है। जहां प्राथमिक विद्यालयों की सुविधा है वहां अनेक स्कूल बिना भवन के पेड़ों के नीचे और खुले आसमान के नीचे चलाए जा रहे हैं। अनेक स्कूलों में टाट–पट्टी, श्यामपट, बच्चों के लिए शौच और पीने के पानी जैसी बुनियादी सुविधाएं उपलब्धता की उम्मीद करना बेमानी हैं। ऐसे में इन स्कूलों में पुस्तकालय और दूसरी पाठ्य सहायक सामग्री की उपलब्धता की उम्मीद करना बेमानी है। अनेक स्कूलों में जरूरत भर के अध्यापक भी नहीं है। पूरे देश में वैसे ही प्रति अध्यापक छात्रों की संख्या अधिक है। यही वजह है कि कुछ साधन–संपन्न लोग अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजने लगे हैं और जिनके पास फीस दे पाने की क्षमता नहीं है वे बुनियादी शिक्षा के प्रति भी अनुत्साहित हैं। आदिवासी और जनजातीय लोगों में शिक्षा के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए हालांकि सरकारी और गैर–सरकारी संगठन लगातार जागरूकता अभियान चला रहे हैं, लेकिन इसका अपेक्षित लाभ मिलता नजर नहीं आ रहा। इससे सबको शिक्षा और समान शिक्षा का संवैधानिक तकाजा पूरा नहीं हो पाता।

सड़क, बिजली, पेयजल संबंधी समस्याओं को सुलझाने के लिए ग्राम पंचायतों को स्वायत्तता दी गई है। केंद्र से मिलने वाले धन को राज्यों की मध्यस्थता की बजाय सीधे पंचायतों तक पहुंचाने का संवैधानिक प्रावधान किया गया है। पंचायतों और स्थानीय निकाय संस्थाओं को यह अधिकार है कि वे ग्रामीण विकास संबंधी योजनाएं खुद तैयार करें, उनके खर्च का खाका बनाएं और उन्हें लागू करें। कई राज्यों में पंचायतों, गांवों के विद्युतीकरण, गलियों में लाइटें लगवाने, खड़ंजा कराने, पारंपरिक जल स्रोतों को पुनर्जीवित करने, महिलाओं को साक्षर और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम और घरेलू और कुटीर उद्योगों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की शुरुआत की गयी है। इससे गांवों के आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों और महिलाओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता आई है। मुख्य सड़कों से गांवों के जुड़ने से कृषि उत्पाद को बाजार और मंडियों तक पहुंचाने में काफी सहूलियत हुई है।

इसके अलावा केंद्र सरकार गांवों और किसानों की दशा सुधारने के लिए कई तरह की योजनाएं चला रही है। शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन और सर्व शिक्षा अभियान शुरू किए गए हैं। ग्रामीण विद्युतीकरण योजना के तहत हर गांव तक बिजली पहुंचाने का काम चल रहा है। इसके अलावा पंचायतों को अधिक स्वायत्तता और सीधे धन मुहैया कराकर

ग्रामीण क्षेत्र में बुनियादी सुविधाओं को बेहतर बनाने के प्रयास हो रहे हैं। संविधान के तिहत्तरवें संशोधन के जरिए पंचायतों को अधिक अधिकार प्रदान कर, उन्हें सीधे धन मुहैया कराकर और विकास संबंधी योजनाएं तैयार करने, धन खर्च करने और सामूहिक रूप से निर्णय कर सकने का अधिकार दे कर ग्रामीण विकास को बल प्रदान करने की कोशिश की गई है।

मगर ज्यादातर पंचायतें अब भी पारंपरिक मान्यताओं से बंधी, जाति और समुदाय में बंटी हुई हैं। पंचायत चुनाव राजनीतिक रंग ले चुके हैं। अधिक अधिकार मिलने के कारण कई लोग पंचायत चुनावों में बाहुबल का इस्तेमाल करने से भी नहीं हिचकते। यही कारण है कि अक्सर पंचायत चुनावों में हिंसक घटनाएं होती हैं। हालांकि पंचायत में महिलाओं और अनुसूचित जन जाति के लोगों के लिए सीटें आरक्षित कर समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की कोशिश की गई है, लेकिन पंचायती राज अधिनियम के लागू हुए बीस साल बीतने के बाद भी यह मकसद पूरी तरह कामयाब नहीं हो पाया है। ज्यादातर पंचायतों पर गांव के शक्तिशाली लोगों का कब्जा है। आरक्षण की वजह से जिन सीटों पर महिलाएं निर्वाचित हुई हैं उन पर उनके पति अधिकार जमाए हुए हैं। पंचायत का सारा कामकाज वही देखते हैं। जहां दलित महिलाएं चुनी गई हैं वहां सवर्ण कहे जाने वाले या गांव के दबंग लोग उन्हें स्वतंत्र रूप से कोई भी निर्णय करने में बाधा डालते हैं। कई जगहों पर उन्हें अपमानित करने की घटनाएं भी सामने आई हैं। इसके अलावा जिला और ब्लॉक अधिकारियों द्वारा पंचायतों को जो मदद मिलनी चाहिए वह नहीं मिल पाने के कारण भी कई योजनाएं लंबे समय तक लटकी रहती हैं या उन पर काम नहीं शुरू हो पाता। ऐसे में गांवों के लिए चलाए जा रहे विकास कार्यक्रम या तो सक्षम लोगों तक सिमट कर रह जाते हैं या उनके लिए मुहैया कराए गए धन का दुरुपयोग होता है।

ग्रामीण विकास संबंधी फीचर लिखते समय इन तमाम पक्षों को ध्यान में रखना जरूरी है। सिर्फ गांवों की बदहाली या सरकारी योजनाओं के बेहतर पक्षों पर ध्यान केंद्रित नहीं होना चाहिए। दोनों का निष्पक्ष विवेचन फीचर का लक्ष्य होना चाहिए। अगर ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को सही तरीके से संचालित कर पाने में ग्राम पंचायतें अक्षम साबित हुई हैं तो इसका भी विश्लेषण होना चाहिए और जिला या ब्लॉक प्रशासन से अपेक्षित सहयोग नहीं मिल पा रहा है या वे पंचायतों को ग्रामीण विकास योजनाओं के लिए प्रोत्साहित कर पाने में अक्षम साबित हो रहे हैं तो उसका भी विवेचन किया जा सकता है। लेकिन फीचर एकांगी न हो, इसके लिए सभी पक्षों का संतुलित तरीके से विश्लेषण किया जाना चाहिए। एक उदाहरण देखिए –

''गरीबी का धूल–धूसरित इलाका माना गया कालाहांडी बहुत चिंताजनक तस्वीर पेश करता है। भवानी शंकर नायक की ओर से देश के सबसे गरीब जिलों में से एक कालाहांडी में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रभाव पर किए गए अध्ययन से पता चलता है कि इस पूरे कार्यक्रम का जोर मिल मालिकों, व्यापारियों, बड़े किसानों और नौकरशाहों को संतुष्ट करने पर रहा है, न कि उपभोक्ता जरूरतें पूरी करने पर। यह कहानी शहरी और ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों की एक जैसी है।''

बेहिसाब घपला : शंकर अय्यर (इंडिया टुडे, 5 अक्तूबर 2005)

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें :

1) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन से आपका क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) कृषि संबंधी फीचर लिखते समय किन पक्षों पर विशेष रूप से ध्यान रखने की जरूरत होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर में किस तरह संतुलन बिठाया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

16.3.3 सामाजिक समस्याओं से संबंधित फीचर

अक्सर गांवों में सड़क, बिजली, पेयजल और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को प्रमुखता से प्रकाशित किया जाता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए प्रयासों की जरूरत से इनकार नहीं किया जा सकता, लेकिन लोगों में अशिक्षा, अंधविश्वास, स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता न होने के कारण भी गांवों में अनेक समस्याएं पैदा होती हैं। गांवों में रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन और सार्वजनिक परिवहन की सुविधाएं तो पहुंच रही हैं जिससे लोगों में देश दुनिया में हो रहे विकास संबंधी सूचनाओं का तेजी से प्रसार हो रहा है। लोग जीवन शैली में बदलाव लाने के प्रति उत्सुक दिखाई देने लगे हैं, लेकिन वैज्ञानिक दृष्टिकोण न पैदा होने के कारण वे अब भी अनेक कुरीतियों में जकड़े हुए हैं। स्वास्थ्य और शिक्षा संबंधी जागरूकता न होने के कारण अनेक लोग निरक्षर रह जाते हैं, खानपान में सावधानी न बरतने और साफ–सफाई पर ध्यान न देने के कारण बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

गरीबी में जीवन बिता रहे अधिकांश माता–पिता अपने बच्चों को इसलिए स्कूल नहीं भेजते कि जब उन्हें अंततः पैतृक पेशे से ही जुड़े रहना है तो उनके लिए

पढ़ाई–लिखाई का कोई अर्थ नहीं है। रोजगार के नए अवसर उपलब्ध न हो पाने के कारण भी अनेक माता–पिता की धारणा है कि उनके बच्चों को नौकरी मिलनी नहीं है। तो क्यों उनकी पढ़ाई पर पैसे खर्च करें और समय बर्बाद करें? इससे बेहतर है कि बचपन से ही उन्हें किसी तकनीकी काम में लगाएं या पैतृक पेशे से जोड़ें। इस तरह सबको शिक्षा का मकसद पूरा नहीं हो पाता। लड़कियों की शिक्षा के मामले में गांवों में स्थिति और भी बदतर है। उन्हें बचपन से ही घरेलू कामकाज में लगा दिया जाता है। कम उम्र में उनकी शादी कर दी जाती है जिससे उनकी पढ़ाई–लिखाई हो पाना तो दूर, वे अपने जीवन के बारे में भी ठीक से नहीं जान पातीं। कम उम्र में विवाह हो जाने से बालिग होने से पहले ही वे मां बन जाती हैं और जल्दी ही कई रोगों से ग्रस्त हो जाती हैं। संतुलित आहार न ले पाने के कारण आधे से अधिक महिलाओं में खून की कमी पाई जाती है। गर्भावस्था के दौरान नियमित जांच न कराने, खानपान पर ध्यान न देने और साफ–सफाई के प्रति जागरूक न होने के कारण अक्सर महिलाओं की मौत हो जाती है।

कई गांवों में अंधविश्वास, जातिवाद और छूआछूत जैसी कुरीतियां अब भी जस की तस जड़े जमाए हुई हैं। इसीलिए अनेक स्थानों पर 'सत परीक्षा' के नाम पर महिलाओं के हाथ जलते अंगारे या खौलते कड़ाह में डलवा दिए जाते हैं, चुड़ैल या डायन घोषित कर कई महिलाओं को पत्थर मारकर मार डाला जाता है। दूसरी जाति के लड़के से प्रेम करने पर अनेक लड़कियों को मौत के घाट उतार दिया जाता है। बाल विवाह, दहेजप्रथा और आडंबरपूर्ण विवाह जैसी कुप्रथाएं अब भी कायम हैं। उच्च और निम्न कही जाने वाली जातियों के बीच अब भी छुआछूत जैसी कुरीतियां दरार कायम किए हुए हैं। अपने संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा होने के कारण ग्रामीण समाज की निचली कही जाने वाली जातियों के लोगों ने ऊंची कही जाने वाली जातियों की छुआछूत जैसी दकियानूसी मानसिकता को स्वीकार करने से इनकार करने की हिम्मत जरूर दिखाई है और राजनीतिक रूप से वे सक्षम हुई हैं। मगर चूंकि ऊंची कही जाने वाली जातियों को उनमें आई यह जागरूकता नागवार गुजरती है, वे अब भी निचली कही जाने वाली जातियों को अपनी प्रजा के रूप में देखती हैं। उच्च जाति के समुदाय चाहते हैं कि आजादी के पहले के समय की तरह वे उनके इशारों पर काम करें और उनकी खिदमत में हमेशा सिर झुकाए तैयार खड़ी रहें। मगर जब वे ऐसा करने से इनकार कर देती हैं तो ऊंची कही जाने वाली जातियों के लोग इसका बदला लेने की ताक में अक्सर दिखाई देते हैं। इसी का नतीजा है कि देश के विभिन्न हिस्सों में अक्सर जातीय संघर्ष की घटनाएं सामने आती हैं। इससे ग्रामीण समाज में जातियों के आधार पर गुट बन गए हैं।

विडंबना है कि इस जातीय संघर्ष को कुछ राजनीतिक दल अपने वोट के लिए उकसाते रहते हैं। इस तरह पहले ग्रामीण समाज में लोगों के बीच पहले जो आपसी सहयोग, भावनात्मक लगाव और एकजुटता दिखाई देती थी वह वैमनस्यता में बदल गई है। पिछले कुछ समय से गांवों में अल्पसंख्यक और बहुसंख्यकों के बीच भी तनाव गहरे हुए हैं। ग्रामीण समाज के विकास पर फीचर के लिए इन तमाम कुरीतियों, सामाजिक बिखराव और जातीय टकराव से संबंधित विषय हो सकते हैं। विषय का चुनाव करते समय सावधानी से समस्याओं की पहचान करने की जरूरत होती है। समाज में फैली कुरीतियों को दूर करने में हालांकि कई सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाएं प्रयासरत हैं, लेकिन उनका कहां तक असर पड़ा है, इसका विवेचन भी होना चाहिए। सामाजिक विद्वेष को दूर करने में पुलिस और जिला प्रशासन किस तरह की

भूमिका अदा कर रहा है, इसका विश्लेषण भी जरूरी है। अशिक्षा, गरीबी, सरकारी योजनाओं का ठीक से लागू न हो पाना, आडंबरपूर्ण जीवन की लालसा, पुरानी मान्यताएं और अंधविश्वास ग्रामीण समाज के विकास में बड़ी बाधाएं हैं। इन्हें दूर करने के लिए क्या प्रयास होने चाहिए, इसके उपायों का भी विवेचन करना फीचर का विषय हो सकता है। एक उदाहरण देखिए –

''महिला प्रतिनिधित्व वाली अधिकांश पंचायतों में यह देखा गया है कि नेपथ्य में कोई पुरुष सदस्य काम कर रहा है। पंचायती राज संस्थाओं की नियमित बैठकों तथा सभाओं में भी इन पुरुषों को राजनैतिक, प्रशासनिक व सामाजिक स्तर पर स्वीकार किया जाता है और मान्यता दी जाती है। हाल ही में इंदिरा गांधी पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास द्वारा चलाए गए पंचायती राज क्षमता विकास अभियान में प्रधान और विकास अधिकारियों के संयुक्त आमुखीकरण कार्यप्रणाली में प्रधान महिलाओं के साथ आए परिवार के पुरुष सदस्यों को प्रशिक्षण से जोड़ने की पैरवी करने वाले एक सांसद का तर्क था कि उन्हें भी प्रशिक्षण से वंचित न रखा जाए, क्योंकि काम तो उन्हें ही करना है। मीडिया की यह खबर कि 'घूघंट की ओट में कुछ नहीं बोली महिला प्रतिनिधि' तथा प्रशासनिक अधिकारियों व स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों की मौन स्वीकृति इस बात का संकेत है कि महिला जन प्रतिनिधियों के लिए सकारात्मक वातावरण की अभी कमी है।''

सामाजिक **दृष्टिकोण में बदलाव : दिलीप बीदावत (पंचायती राज अपडेट, अगस्त 2005)**

16.3.4 लोकजीवन संबंधी फीचर

हालांकि शहरी जीवन की चमक–दमक से प्रभावित होकर ग्रामीण समाज में अनेक आधुनिक सुविधाओं के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ा है, लेकिन अब भी वहां अनेक लोक परपराएं जीवित हैं। होली, दीवाली, दशहरा, छठ, तीज जैसे त्योहार मनाने का तरीका, गाने–बजाने, मनोरंजन के साधनों का इस्तेमाल कहीं न कहीं गांवों में अब भी पुराने रूप में विद्यमान है। जिन ग्रामीण समाजों में लोग शैक्षिक रूप से पिछड़े हैं वहां लोक परपराएं अधिक सुरक्षित हैं। जिन ग्रामीण समाजों में लोग पढ़े–लिखे अधिक हैं और उनका शहरों से संपर्क लगातार बना रहता है वहां लोक परंपराएं धीरे–धीरे लुप्त होती गई हैं। गांवों में पहले गोंड़, धोबी, अहीर जातियों के अपने लोक गीत और नृत्य हुआ करते थे जिन्हें गाने और प्रस्तुत करने के अपने तरीके हुआ करते थे। धोबी गान और नृत्य–नाटक में जहां मुख्य रूप से मृदंग और छोटी झाल का इस्तेमाल किया जाता था वहीं गोंड़ गायन और नृत्य में हुडुक और बड़ी झाल का। अहीरों द्वारा गाई जाने वाली नजारी में कोई वाद्य यंत्र इस्तेमाल नहीं किया जाता था। कई अवसरों पर नाटक खेलने की परंपरा थी। ये नाटक प्रायः ग्रामीण जीवन की समस्याओं या मिथकीय–पौराणिक कथाओं पर आधारित होते थे। ये लोक परंपराएं थोड़े–बहुत अंतर के साथ अनेक राज्यों में प्रचलित हैं।

हर राज्य इलाके की भौगोलिक बनावट, लोगों के रहन–सहन के अनुसार वहां की अपनी लोक परंपराएं हैं। गायन, वाद, नृत्य की अलग शैलियां हैं। यह विचित्र नहीं है कि पूरे देश में लोकगीत पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं ज्यादा गाती हैं। नाटकों और वाद्य यंत्रों के साथ गाए जाने वाले गीतों में पुरुषों की भागीदारी अधिक होती है। महिलाएं प्रायः सामूहिक रूप से गीत गाती हैं और वे वाद्य यंत्रों का उपयोग नहीं करतीं।

लगभग हर उत्सव और अवसर के लिए गीत हैं। लेकिन ज्यादा विविधता विवाह गीतों में पाई जाती है। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि विवाह समाज में सबसे बड़ा उल्लास का अवसर होता है। ग्रामीण समाज में चूंकि एक ही तरह के काम करते–करते लोगों में एकरसता–सी आ जाती है इसलिए विवाह के अवसर पर वे कई दिन पहले से तैयारी में लग जाते हैं। चाहे वह लड़की का विवाह हो या लड़के का, उल्लास दोनों में बराबर दिखाई देता है। महिलाएं कई दिन पहले से गायन शुरू कर देती हैं। यही वजह है कि विवाह गीतों में सबसे अधिक विविधता दिखाई देती है। कुआं पूजन, मांड़ो, हल्दी, नहछु–नहावन, द्वाराचार, डलिया पूजन, विवाह, कोहबर, भोजन के समय गाली गायन, विदाई आदि के गीत आमतौर पर गाए जाते हैं।

लोकगीतों में आल्हा, बिरहा, होली चैती, कजरी, कीर्तन आदि की परंपरा भी है। ये गीत प्रायः पुरुष गाते हैं। इसके अलावा बिहुला, सोरठी–बृजभार, सारंगा–विजयमल जैसी कथाओं को गीतों में ढाल कर गाने की परंपरा है और इन्हें महिला और पुरुष दोनों गाते–सुनाते हैं। फिल्मी गीतों और संगीत के कैसेट बनाने वाली कंपनियों के प्रचार–प्रसार के कारण पारंपरिक लोकगीत धीरे–धीरे नष्ट हो रहे हैं। शादी अवसर पर भी फिल्मी धुनों पर गीत रच कर गाए जाने लगे हैं। होली, चैती आदि के कैसेट आ जाने से सामूहिक गायन की बजाय अब गांवों में भी वही बजाये जा रहे हैं। बिरहा व्यावसायिक गायन बन गया है। कीर्तन की जगह कैसेटों में आने वाले भजनों ने ले ली है। इस तरह पारंपरिक लोक वाद्यों और गायन शैली की परंपरा धीरे–धीरे लुप्त हो रही है। लोक नाटक अब सिर्फ रामलीला तक सीमित होकर रह गए हैं। लोकगीतों, लोक वाद्यों की तरह लोक चित्रकलाएं भी धीरे–धीरे विलुप्त हो रही हैं। पहले गांवों में चावल को पीस कर, वनस्पतियों और उनके फूलों से रंग निकाल दीवारों पर चित्रकारी की परंपरा थी। दीवाली, रामनवमी, विवाह आदि के अवसर पर मिटटी, गेरू आदि से तरह–तरह के भित्ति चित्र बनाए जाते थे। अब वह परंपरा धीरे–धीरे नष्ट हो रही है। भित्ति चित्र बनाने की शैलियां भी विलुप्त हो रही हैं।

इन लुप्त होती परंपराओं और शैलियों को संरक्षित करने की जरूरत है। पारंपरिक गीतों, लोक वाद्यों और गायन शैली को सुरक्षित रखने की दरकार है। इस दिशा में सरकारें लोगों को प्रोत्साहित करने का प्रयास तो करती हैं, लेकिन जमीनी स्तर पर, इसके प्रयास कम ही दिखते हैं। कुछ लोग सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने के लिए शहरों तक इस तरह के प्रयास कर तो लेते हैं, लेकिन गांवों में जाकर इन परंपराओं को सुरक्षित रखने के प्रयास नहीं हो पाते। राजस्थान में कोमल कोठारी ने अपने स्तर पर इसका गंभीर प्रयास किया था। उन्होंने लोक कलाओं को सुरक्षित संरक्षित करने के लिए एक केंद्र की स्थापना की और विभिन्न इलाकों के लुप्त होते गीतों, गायन शैलियों वाद्य यंत्रों को सुरक्षित–संरक्षित करने का प्रयास किया और नए लोक कलाकारों को प्रोत्साहित किया।

लोक जीवन पर आधारित फीचर के लिए विषय का चुनाव करते वक्त लोक परंपराओं में वहां गाए जाने वाले गीतों, वाद्य यंत्रों को बजाने की शैली, भित्ति चित्र आंकने के तरीके आदि को भी समाहित किया जाना चाहिए। इस फीचर का एक प्रमुख उद्देश्य लोक कलाओं के बारे में जानकारी प्रदान करने के साथ–साथ युवा पीढ़ी को उनके प्रति प्रोत्साहित करना भी होना चाहिए ताकि वे उन्हें संरक्षित–सुरक्षित करने के लिए आगे आएं। व्यावसायिकता पारंपरिक कलाओं को नष्ट कर रही है, इसका बोध युवा पीढ़ी में पैदा होना चाहिए। फिल्मों या कैसेटों के जरिए लोक धुनों का इस्तेमाल जरूर हो रहा है, लेकिन लोक कलाकार विलुप्त हो रहे हैं। लोक वाद्य और उन्हें बजाने की

शैलियां अंधेरे में जा रही हैं। उन्हें बचाने का प्रयास भी होना चाहिए। इसलिए न सिर्फ गांवों, आदिवासी, जनजातीयों के रहन–सहन, जीवन–शैली, बल्कि उनकी लुप्त होती लोक परंपराओं को भी केंद्र में रखकर फीचर लेखन किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दें।

1) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लेखन के लिए विषय का चुनाव करते वक्त किन बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए?

.....

.....

.....

.....

.....

2) ग्रामीण जीवन की समस्याओं पर फीचर लेखन करते समय किस तरह संतुलन बिठाया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) लोक जीवन पर फीचर लेखन का मुख्य उद्देश्य क्या होना चाहिए और लोक परंपराओं को सुरक्षित –संरक्षित करने में एक फीचर किस तरह की भूमिका निभा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

16.4 भाषा–शैली और प्रस्तुति

ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय विषय के चुनाव में सावधानी के साथ–साथ इस बात का ध्यान रखना भी जरूरी होता है कि जिस विषय को उठा रहे हैं उसकी पूरी तैयारी हो। संबंधित विषय पर पर्याप्त आंकड़े इकट्ठा करें। ये आंकड़े सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा किए गए सर्वेक्षणों–अध्ययनों से भी प्राप्त हो सकते हैं और इंटरनेट, अखबारों–पत्रिकाओं से भी। लेकिन ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखने वाले से यह भी उम्मीद की जाती है कि उसका जुड़ाव भी गांवों से हो। सिर्फ तथ्यों

की जानकारी प्राप्त कर लेने या अध्ययन से समस्याओं के बारे में जान लेने भर से फीचर की विश्वसनीयता मुकम्मल नहीं होती, तो गांवों में जाकर वहां के लोगों से बातचीत करके और संबंधित अधिकारियों, पंचायत प्रतिनिधियों से जानकारी हासिल करके समस्या की तह तक जाने की कोशिश करनी चाहिए।

ग्रामीण समस्याओं में महिलाओं, बुजुर्गों की स्थिति, कृषि क्षेत्र में किसानों की परेशानियां, सामाजिक विद्वेष, राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्र के विभिन्न पहलुओं आदि का सूक्ष्मता से अध्ययन विश्लेषण किया जाना चाहिए। कभी भी कई विषयों को एक साथ मिला कर फीचर नहीं लिखा जाना चाहिए। इससे लक्ष्य नेपथ्य में चला जाता है। अक्सर जिन लोगों के पास विषय पर तैयारी मुकम्मल नहीं होती वे कई विषयों को आपस में मिला कर सामग्री पूरी करने की कोशिश करते हैं। इससे पाठकों को किसी भी विषय पर मुकम्मल जानकारी उपलब्ध नहीं होती, बल्कि वे कई विषयों के भंवर में उलझ कर रह जाते हैं। यह जरूरी है कि जिस भी विषय को उठाएं, उसके अलग–अलग पहलुओं पर क्रम से और तर्कपूर्ण बात करते चलें। ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि आपका ध्यान विषय पर केंद्रित तो हो लेकिन विभिन्न पहलू उलझते चले जाएं। इससे आप क्या कहना चाहते हैं, यह समझ में नहीं आ पाता। इसलिए तरीका यही होता है कि लिखने से पहले अलग से विभिन्न पक्षों के बारे में नोट्स ले लें और बिंदु रूप में उनका क्रम भी निर्धारित कर लें। इससे विषय पर समुचित तरीके से प्रकाश डाल पाने में सुविधा होती है और विषय के तथ्य और क्रम भी आपस में नहीं उलझते। कई बार ऐसा भी होता है कि आपने किसी विषय से संबंधित भरपूर तथ्य इकट्ठा कर लिए हैं, क्रम भी ठीक है, लेकिन फीचर में आप क्या कहना चाहते हैं यह स्पष्ट नहीं हो पाता? ऐसा भाषा पर अधिकार न होने के कारण होता है। इसलिए तथ्यों और अनुभवों के साथ–साथ भाषा पर अधिकार होना भी फीचर लेखन की आवश्यक शर्त है। जैसा कि आप जानते हैं, फीचर लेखन का कोई निर्धारित ढांचा नहीं होता लेखक अपनी भाषा और शैली के बल पर उसे रोचक, सरस और प्रवाहपूर्ण बना सकता है, जहां कथा शैली की जरूरत हो, जहां संस्मरणात्मक विवेचन की जरूरत हो वहां भी इस्तेमाल किया जाना चाहिए और जहां गंभीर तथ्यात्मक विश्लेषण की जरूरत हो वहां वैसा भी किया जा सकता है। इसलिए फीचर लेखन में कई तरह की भाषा और शैलियों का इस्तेमाल संभव है। कथात्मक या संस्मरणात्मक अंशों में साहित्यिक–काव्यात्मक भाषा–शैली का इस्तेमाल किया जा सकता है तो आंकड़ों के विश्लेषण–विवेचन में आर्थिक शब्दावली, वैज्ञानिक तथ्यों के विवेचन में विज्ञान और तकनीकी शब्दावली का उपयोग संभव है। लेकिन इस बात का ध्यान हमेशा रखा जाना चाहिए कि भाषा ऐसी हो जिसे समझने में साधारण से साधारण व्यक्ति को भी आसानी हो और वह विषय के बारे में बिना किसी अवरोध के जानकारी प्राप्त कर सके। एक उदाहरण से इसे आसानी से समझा जा सकता है –

''लोक हित के लिए बनाई गई योजनाओं में लोगों की बुनियादी आवश्यकताओं, रुचियों गांव की परिस्थितियों आदि का ध्यान नहीं रखा गया। परिणामस्वरूप ग्रामीण विकास योजनाएं ग्रामीण अर्थव्यवस्था में विशेष परिवर्तन नहीं ला पाईं। इससे गरीबी, असमानता, बेरोजगारी एवं पलायन जैसी समस्याओं में और अधिक वृद्धि हुई। पारदर्शिता एवं सूचना के अभाव में योजनाओं तक पहुंच नहीं बन पाई। विकास कार्य ठेकेदारों, अफसरों, बिचौलियों के लाभ का साधन मात्र बनकर रह गए। ठेकेदारों से बात करने पर पता चलता है कि किसी भी निर्माण कार्य में 35 से 40 प्रतिशत तक

अधिकारियों को कमीशन देना पड़ता है। उसके बाद ठेकेदार का अपना लाभ। इस प्रकार निर्माण कार्य की गुणवत्ता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है।''

स्थानीय स्वशासन में जन भागीदारी : विद्यासागर वाजपेयी
(पंचायती राज अपडेट, अगस्त 2005)

आपने देखा कि भाषा में कैसी सहजता है। हालांकि कुछ संस्कृतनिष्ठ शब्दों का उपयोग किया गया है लेकिन भाषा के प्रवाह में वे कथन को समझने में कहीं भी बाधक नहीं बनते। बातों और तथ्यों का क्रम सही तरीके से रखा गया है। जो बात जहां कही जानी चाहिए उसे वहीं सहज तरीके से कहा गया है।

16.5 सारांश

- ग्रामीण समस्याओं से अभिप्राय संपूर्ण ग्रामीण परिवेश, समाज, परंपराओं, संस्कृतियों में आ रहे बदलाव और विकृतियों से है। ग्रामीण विकास के नाम पर चलाई जा रही योजनाओं के क्रियान्वयन, स्थानीय शासन को मजबूत और स्वायत्त बनाने के चल रहे प्रयासों, आर्थिक विकास की गति, शिक्षा, रोजगार, कानून–व्यवस्था आदि के बारे में विश्लेषण–विवेचन से है।
- ग्रामीण समाज हालांकि मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है लेकिन वहां के जीवन से जुड़ी अनेक समस्याएं हैं। इनके आधार पर ग्रामीण फीचर के चार प्रकार निर्धारित किए जा सकते हैं–कृषि संबंधी, सामाजिक समस्याओं से संबंधित, ग्रामीण विकास और लोकजीवन से संबंधित।
- कृषि संबंधी फीचर में खेती और किसानों की दशा में सुधार लाने के मकसद से चलाई जा रही योजनाओं, उनकी पहुंच की स्थिति के बारे में विश्लेषण–विवेचन किया जाता है।
- कृषि के अलावा गांवों में अशिक्षा, अंधविश्वास, स्वास्थ्य और पोषाहार के प्रति जागरूकता की कमी जैसी अनेक समस्याएं हैं जिनकी वजह से ग्रामीण समाज का विकास प्रभावित होता है। इन समस्याओं के बारे में फीचर लेखन सामाजिक समस्याओं के अंतर्गत किया जाता है।
- शहरों की तुलना में गांवों में सड़क, बिजली, पेयजल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, शैक्षणिक संस्थानों की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है। जहां ये सुविधाएं हैं भी वे देखरेख और धन के अभाव में बदहाल हैं। इन समस्याओं के बारे में फीचर लेखन को ग्रामीण विकास संबंधी लेखन के अंतर्गत रखा जा सकता है।
- आधुनिक जीवन शैली का प्रभाव ग्रामीण समाज पर भी पड़ा है, जिससे वहां के रहन–सहन में कई तरह के बदलाव आए हैं। इससे पारंपरिक लोक कलाओं पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। कई लोक गायन, वादन, नाट्य और चित्रांकन शैलियां विलुप्त हो गई हैं या विलुप्ति के कगार पर हैं। लोक जीवन के विभिन्न पक्षों पर फीचर लेखन को लोकजीवन से संबंधित समस्याओं के अंतर्गत रखा जा सकता है।
- ग्रामीण समस्याओं पर फीचर, लेखन के लिए विषय के चुनाव तथ्यों के संग्रह और भाषा–शैली में विशेष सावधानी बरतने की जरूरत होती है। भाषा के उलझाव

और तथ्यों को क्रम से प्रस्तुत न कर पाने की स्थिति में फीचर दुरूह और अप्रभावी बन जाता है।

अभ्यास

1) ग्रामीण विकास संबंधी फीचर लेखन के लिए विषय का चुनाव करते समय किन–किन क्षेत्रों को ध्यान में रखा जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) क्या ग्रामीण समाज में आए किन बदलावों और विकृतियों को आप फीचर का विषय बना सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) लोक जीवन के कौन–कौन से पहलू फीचर लेखन के विषय हो सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4) ग्रामीण समस्याओं पर फीचर लिखते समय किस तरह की तैयारी और सावधानी आवश्यक होती है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

16.6 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्नों –1

1) देखिए, भाग 16.2

2) दखिए, उपभाग 16.3.1

3) देखिए, उपभाग 16.3.2, उत्तर अपने शब्दों में लिखने का प्रयास कीजिए

बोध प्रश्न –2

1) देखिए, उपभाग 16.3.3 और उत्तर अपने शब्दों में लिखिए।

2) इकाई के अध्ययन के पश्चात अलग–अलग उपभागों में उपलब्ध दिशा निर्देश के आलोक में उत्तर लिखिए।

3) देखिए, उपभाग 16.3.4

- अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्नों के उत्तर स्वयं लिखिए।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY